वो ज़माना और था.....

वो ज़माना और था.....जब दरवाजों पे ताला नहीं भरोसा लटकता था , खिड़कियों पे पर्दे भी आधे होते थे, ताकि रिश्ते अंदर आ सकें।

पड़ोसियों के आधे बर्तन हमारे घर और हमारे बर्तन उनके घर मे होते थे।
पड़ोस के घर बेटी पीहर आती थी तो सारे मौहल्ले में रौनक होती थी , गेंहूँ साफ करना किटी पार्टी सा हुआ करता था

वो ज़माना और था.....
जब छतों पर किसके पापड़ और आलू चिप्स सूख रहें है बताना मुश्किल था।

जब हर रोज़ दरवाजे पर लगा लेटर बॉक्स टटोला जाता था , डाकिये का अपने घर की तरफ रुख मन मे उत्सुकता भर देता था ।

वो ज़माना और था.....
जब रिश्तेदारों का आना,
घर को त्योहार सा कर जाता था , मौहल्ले के सारे बच्चे हर शाम हमारे घर ॐ जय जगदीश हरे गाते .....और फिर हम उनके घर णमोकार मंत्र गाते ।

जब बच्चे के हर जन्मदिन पर महिलाएं बधाईयाँ गाती थीं....और बच्चा गले मे फूलों की माला लटकाए अपने को शहंशाह समझता था।

जब भुआ और मामा जाते समय जबरन हमारे हाथों में पैसे पकड़ाते थे...और बड़े आपस मे मना करने और देने की बहस में एक दूसरे को अपनी सौगन्ध दिया करते थे।

वो ज़माना और था .....
कि जब शादियों में स्कूल के लिए खरीदे काले नए चमचमाते जूते पहनना किसी शान से कम नहीं हुआ करता था , जब छुट्टियों में हिल स्टेशन नहीं मामा के घर जाया करते थे....और अगले साल तक के लिए यादों का पिटारा भर के लाते थे।

कि जब स्कूलों में शिक्षक हमारे गुण नहीं हमारी कमियां बताया करते थे।

वो ज़माना और था.....
कि जब शादी के निमंत्रण के साथ पीले चावल आया करते थे , दिनों तक रोज़ नायन गीतों का बुलावा देने आया करती थी।

बिना हाथ धोये मटकी छूने की इज़ाज़त नहीं थी।

वो ज़माना और था.....

गर्मियों की शामों को छतों पर छिड़काव करना जरूरी था , सर्दियों की गुनगुनी धूप में स्वेटर बुने जाते थे और हर सलाई पर नया किस्सा सुनाया जाता था।

रात में नाखून काटना मना था…..जब संध्या समय झाड़ू लगाना बुरा था ।

वो ज़माना और था……..
बच्चे की आँख में काजल और माथे पे नज़र का टीका जरूरी था , रातों को दादी नानी की कहानी हुआ करती थी , कजिन नहीं सभी भाई बहन हुआ करते थे ।

वो ज़माना और था……
जब डीजे नहीं , ढोलक पर थाप लगा करती थी.. गले सुरीले होना जरूरी नहीं था, दिल खोल कर बन्ने बन्नी गाये जाते थे , शादी में एक दिन का महिला संगीत नहीं होता था आठ दस दिन तक गीत गाये जाते थे।

वो ज़माना और था……
कि जब कड़ी धूप में 10 पैसे का बर्फ का पानी…. गिलास के गिलास पी जाते थे मगर गला खराब नहीं होता था,
जब पंगत में बैठे हुए रायते का दौना तुरंत पी जाते….. ज्यों ही रायते वाले भैया को आते देखते थे।
जब बिना AC रेल का लंबा सफर पूड़ी, आलू और अचार के साथ बेहद सुहाना लगता था।

वो ज़माना और था…….
जब सबके घर अपने लगते थे……बिना घंटी बजाए बेतकल्लुफी से किसी भी पड़ौसी के घर घुस जाया करते थे , किसी भी छत पर अमचूर के लिए सूखते कैरी के टुकड़े उठा कर मुँह में रख लिया करते थे , अपने यहाँ जब पसंद की सब्ज़ी ना बनी हो तो पडौस के घर कटोरी थामे पहुँच जाते थे।

वो ज़माना और था…..
जब पेड़ों की शाखें हमारा बोझ उठाने को बैचेन हुआ करती थी , एक लकड़ी से पहिये को लंबी दूरी तक संतुलित करना विजयी मुस्कान देता था , गिल्ली डंडा, चंगा पो, सतोलिया और कंचे दोस्ती के पुल हुआ करते थे।

वो ज़माना और था…..
हम डॉक्टर को दिखाने कम जाते थे डॉक्टर हमारे घर आते थे….डॉक्टर साहब का बैग उठाकर उन्हें छोड़ कर आना तहज़ीब हुआ करती थी
सबसे पसंदीदा विषय उद्योग हुआ करता था….भगवान की तस्वीर चमक से सजाते थे।
इमली और कैरी खट्टी नहीं मीठी लगा करती थी।

वो ज़माना और था…..
जब बड़े भाई बहनों के छोटे हुए कपड़े ख़ज़ाने से लगते थे , लू भरी दोपहरी में नंगे पाँव गालियां नापा करते थे।

कुल्फी वाले की घंटी पर मीलों की दौड़ मंज़ूर थी ।

वो ज़माना और था……
जब मोबाइल नहीं धर्मयुग, साप्ताहिक हिंदुस्तान, सरिता और कादम्बिनी के साथ दिन फिसलते जाते थे , TV नहीं प्रेमचंद के उपन्यास हमें कहानियाँ सुनाते थे।
जब पुराने कपड़ों के बदले चमकते बर्तन लिए जाते थे।

वो ज़माना और था…….
स्वेटर की गर्माहट बाज़ार से नहीं खरीदी जाती थी।
मुल्तानी मिट्टी से बालों को रेशमी बनाया जाता था

वो ज़माना और था……
कि जब चौपड़ पत्थर के फर्श पे उकेरी जाती थी , पीतल के बर्तनों में दाल उबाली जाती थी , चटनी सिल पर पीसी जाती थी।

वो ज़माना और था…..
वो ज़माना वाकई कुछ और था।